आधुनिक काल में बंगाल स्कूल का महत्त्व

*डॉ. राकेश कुमार सिंह

शोधपत्र-ललित कला

आधुनिक भारत की कला की उत्पत्ति का इतिहास एक विकासशील कला का इतिहास है। इसके आरंभिक सूत्र इस देश के इतिहास तथा भौगोलिक परिस्थितियों से जुड़े हुए हैं। विस्तारवादी, साम्राज्यवादी बर्बर तथा लालची विदेशी शक्तियों ने इसे बार–बार आक्रान्त किया। अतः एक स्वतंत्र–चेत्ता राष्ट्र के रूप में इस देश की विचारधारा कला एवं संस्कृति का विकास अपेक्षित दिशा में नहीं हो सका ऐसी परिस्थितियों में आधुनिक भारतीय चित्रकला की कोई राष्ट्रीय व्यख्या संभव नहीं है। जैसे कोई झरना गिरकर अनेक छोटी–छोटी धाराओं में बहने लगे, कुछ ऐसी ही स्थिति आज भारतीय चित्रकला की है। आधुनिक भारतीय चित्रकला का इतिहास प्रचलित परंपरागत कला–शैलियों (राजस्थानी, पहाड़ी तथा मुगल) के अवसान तथा भारत में अंग्रेजी राज्य की स्थापना के साथ जुड़ा है। भारत में कुछ पश्चिमी चित्रकार मुख्यतः ईस्ट इंडिया कंपनी अथवा ब्रिटिश शासन के अधिकारियों के साथ आए तथा कुछ अन्य चित्रकार भारत की समृद्धि की ख्याति सुनकर विदेशी व्यपारियों की भांति भारत में अपना भाग्य आजमाने आए।

भारत में अंग्रेजी शासन के फलस्वरूप कला के क्षेत्र में दो प्रभाव पड़े। एक तो यह कि स्थानीय चित्रकारों ने अपनी समझ के अनुसार पश्चिमी कला के मिश्रण से एक संकर कला–शैली का सूत्रपात किया, जिसे कंपनी शैली कहा जाता है। दूसरा, यह कि समाज के उन सभी वर्गों में, जो कलाओं के संरक्षक समझे जाते हैं, पश्चिमी कला के प्रति आदरभाव और अपनी कला के प्रति हीनता की भावना उत्पन्न हुई। स्वयं अंग्रेजों ने इस भावना को बढ़ाने तथा पश्चिमी चित्रकारों को भारत में प्रोत्साहित करने का भरपूर प्रयत्न किया। जो भारतीय चित्रकार पश्चिमी शैली में कार्य करते थे, अंग्रेजों ने उनकी भी पीठ थपथपाई। 18वीं सदी के मुगल शैली के चित्रकारों पर उपरोक्त ब्रिटिश चित्रकारों की कला का बहुत प्रभाव पड़ा। उनकी कला में यूरोपीय तत्वों का बहुत अधिक मिश्रण हो गया और इस प्रकार जो नई शैली विकसित हुई, उसे कंपनी शैली कहते हैं। कुछ विद्वानों ने इसे पटना शैली कहा, परन्तु यह नाम उचित नहीं है, क्योंकि इस शैली का प्रभाव बंगाल से सिंध तक, पंजाब से महाराष्ट्र एवं नेपाल में भी था। इस शैली का प्रभाव अंग्रेजों और ईस्ट इंडिया कंपनी के साथ–साथ बढ़ा था, अतः इसे कंपनी शैली ही कहना उचित है। 19वीं सदी के अंत में बंगाल में पुररूत्थान आंदोलन हुआ। अंग्रेजों ने भारतीय जनता को उसकी सांस्कृतिक विरासत से विमुख करके अंग्रेजी सभ्यता सिखाने की चेष्टा की। अंग्रेजों ने भारतीय कला की भी कटु आलोचना की। 'बर्डवुड' नामक एक अंग्रेजी अधिकारी ने प्राचीन बौद्ध प्रतिमाओं की तीखी समालोचना करते हुए कहा था कि 'एक उबला हुआ चर्बी से बना पकवाल भी आत्मा की उत्कट निर्मलता तथा स्थिरता के प्रतीक का काम दे सकता है।' जिन यूरोपियनों को भारत से थोड़ी भी सहानुभूति थी, उन्होंने श्रेष्ठ भारतीय मूर्तियों पर यूनानी प्रभाव बताया। इन परिस्थितियों को देखते हुए रवीन्द्रनाथ ठाकुर तथा देशबंधु चित्तरंजन दास आदि ने भारतीय जनता को उद्बोधित करने का प्रयत्न किया।

सन् 1884 में 'श्री ई.बी. हैवेल' मद्रास कला विद्यालय के प्रधानाचार्य बने। भारत में कांग्रेस की स्थापना होने से जागृति की कुछ लहर आई। हैवेल ने भी ृपापीपेंइसमें योगदान दिया। 1866 में उन्होंने संसार भर का ध्यान भारतीय चित्रकला की ओर आकर्षित किया। उन्होंने कहा कि यूरोपीय कला तो केवल सांसारिक वस्तुओं का ज्ञान कराती हैं, परन्तु भरतीय कला सर्वव्यापी, अमर तथा अपार है। कुछ समय पश्चात कलकत्ता कला–विद्यालय के प्रिंसीपल बने। यहां उनके संपर्क में रवीन्द्रनाथ ठाकुर आए, जिन्होंने आगे चलकर 'पुर्नत्थान' का सूत्रपात किया। उन्होंने पश्चिमी, ईरानी, चीनी, जापानी, मुगल, राजपूत, अजन्ता के समन्वय से नयी कला का आरंभ किया। 1905 में कलकत्ता आर्ट स्कूल के प्रिंसीपल नियुक्त होने के बाद उन्होंने अनेक शिष्य तैयार किए, जो देश के विभिन्न भागों में फैले और कला का प्रचार करने लगे। नंदलाल बसु, असित कुमार हल्दर, क्षितिन्द्रनाथ मजूमदार, समरेंद्रनाथ गुप्त, देवी प्रसाद राय चौधरी तथा उकील बंधु इनमें प्रमुख थे। 1907 में 'इंडियन सोसायटी ऑफ ओरिएंटल आर्ट' की स्थापना के बाद इन सभी ने इस संस्था की प्रथम प्रदर्शनी में भाग लिया। ई.बी.हैवेल, पर्सी ब्राउन, आनंद कुमारस्वामी आदि ने भी इस संस्था को पूर्ण सहयोग दिया। अवनी बाबू ने सभी प्रकार के प्रयोग किए जिसमें काष्ठ, रेशम तथा भित्ति चित्रण भी थे।

* असिस्टेंट प्रोफेसर, ललित कला विभाग, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र (हरियाणा)

बंगाल शैली की विशेषताएँः— बंगाल स्कूल की तत्कालीन प्रचलित कला शैली मे निर्मित प्रायः सभी चित्रों में भारतीय परंपरा का ध्यान रखा जाता था। बंगाल शैली के चित्रकारों ने शैली के साथ—साथ चित्रांकन के माध्यमों में भी समन्वयात्मक रुख अपनाया। ब्रिटिश तथा जापानी जलरंग पद्धति के मिश्रण से 'वॉश पद्धति' का विकास किया गया। इसी के साथ रंगों में टेम्परा पद्धति में भी कार्य किया गया। जिसमें नंदलाल बसु, असित कुमार, क्षितिंद्रनाथ, यामिनीराय प्रमुख थे। इस पद्धति में धूसर आभा वाले कम चटख, सीधे सपाट रंगों के प्रयोग के बाद रेखाओं द्वारा आकृतियां अभारने की प्रथा थी, जो आज भी प्रचलित है। बंगाल शैली के कलाकारों की यह मान्यता थी कि चित्राकृतियों में गति लाने और प्रकृति के रूपायन तथा चित्रों की ऊर्जा व लय के विकास के लिए रेखांकन की आवश्यकता है। अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण बंगाल स्कूल के कला आंदोलन ने देशव्यापी ख्याति अर्जित की तथा भारतीय कला को विदेशी कला की जकड़ से मुक्त करने का प्रयास किया। बंगाल शैली की वॉश पद्धति ने इन कलाकारों को सिर्फ विख्यात ही नहीं किया, बल्कि इनका प्रभाव पूरे भारत में फैल गया। ये सभी कलाकार स्वतंत्रतापूर्ण देश के विभिन्न कला स्कूलों के प्रधानाचार्य बन गए। देवी प्रसाद मद्रास चले गए, असित कुमार शांति निकेतन चले गए, समनेंद्रनाथ लाहौर चले गए। क्षितिंद्रनाथ इलाहाबाद, उकीलबंधू ने दिल्ली कला विद्यालय स्थापित किया। नंदलाल बोस कलाभवन, शांति निकेतन के मुख्य संचालक बन गए। बंगाल स्कूल के कलाकारों में असित कुमार हाल्दार ने अपनी लगन तथा अथक प्रयास से स्वयं में अनेक कलाओं का विकास किया था। वे एक कल्पनाशील, भाव—प्रवण चित्रकार होने के साथ—साथ अच्छे शिल्पकार, कला समालोचक, कवि, विचारक एवं दक्ष शिक्षक थे। चित्रकला में पश्चिमी अंधानुकरण की परिपाटी को तोड़ कर भारतीय चेतना का संचार करने वाले अप्रतिम गुरू अवनी बाबू की शिष्य परंपरा में असित कुमार का नाम गर्व से लिया जाता है। असित जी ने बंगाल स्कूल की प्रगति में अपना पूरा—पूरा योगदान दिया। उन्होंने कला—क्षेत्र में अनेक प्रयोग किए। जीवन तथा प्रकृति से भी बहुत कुछ सीखा। अतः अपनी कला को मौलिक गुणों से सजाने में अधिक कठिनाई नहीं हुई। तैल, जल रंग आदि विभिन्न माध्यमों में उन्होंने अपने माध्यम की खोज जारी रखी। किसी विशिष्ट शैली अथवा परंपरा में बंधना उन्हें प्रिय नहीं था। अपने चित्रों के लिए विषय का चुनाव भारतीय इतिहास, पुराण अथवा सामाजिक जीवन से किया, जिसका प्रभाव अन्य कलाकारों पर भी स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। मात्र 12 साल की आयु में असित कुमार ने महाभारत के एक प्रसंग 'द्रोणाचार्य द्वारा अर्जुन को धनुर्विद्या का दान' पर सुंदर चित्रों का सृजन किया। विभिन्न भावों के अनुरूप चित्र में रेखाओं तथा रंगों का चयन करने में दक्ष थे। उनके चित्रों की विशेषता थी कि वे संपूर्ण रूप से भारतीय थे। वे एक चित्रकार के रूप में तो विख्यात हुए ही, एक अच्छे कला—शिक्षक के रूप में भी उन्हें पर्याप्त सम्मान मिला। राजस्थान आर्ट स्कूल, लखनऊ आर्टस्कूल में कई वर्षों तक अध्यापन कार्य किया। जब वे शांति निकेतन में थे तो वहां के कला भवन का विकास अत्यंत रूचि लेकर किया। इलाहाबाद संग्रहालय में असित कुमार हल्दर की प्रतिभा को स्थान देकर उत्तरप्रदेश सरकार ने उन्हें विशेष सम्मान दिया। वे बंगाल स्कूल के काव्यमयी कलाकार के रूप में गिने जाते थे। वे एक चित्रकार के साथ अच्छे कवि तथा लेखक भी थे। वे संस्कृत के अच्छे ज्ञाता थे तथा चित्रकारी व लेखन के साथ—साथ छाया चित्रांकन भी करते थे। बंगाली में उन्होंने काफी पुस्तकें लिखी। जिससे 1941 में उन्हें 'राय साहब' का खिताब मिला। मूर्तिकला में भी वे बहुत रूचि रखते थे। वे वास्तव में त्रिकालदर्शी थे। उन्हें अपनी मृत्यु से 2 साल पहले ही ज्ञात हो गया था कि उनकी मृत्यु कैसे होगी, जिसे उन्होंने पहले ही चित्रित कर दिया था। 10 फरवरी, 1964 में उनकी जीवन—लीला समाप्त हो गई। उन्हें एक बहुमुखी प्रतिभा वाले सृजनशील चित्रकार, कलाकार के रूप में सदा याद किया जाता है। असित कुमार ने हर कार्य—शैली, हर तकनीक पर अपनी मुहर लगाई है तथा उसे अपनी सृजनात्मकता व लयात्मक सौंदर्य से सजाया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. भार्गव' सरोज, सौन्दर्य बोध एवं ललित कलाएं— कला प्रकाशन, बी॰एच॰यू॰ वाराणासी—1999 2. महाजन अनुपम, भारतीय शास्त्रीय संगीत एवं सौन्दर्य शास्त्र, परनामी प्रिटिंग प्रैस, पंचकूला— 1993 3. 'रीड' हरबर्ट, आर्ट एंड सोसायटी, लदंन— 1967 4.'जौहरी' सीमा, संगीतायन, राधा प्रकाशन,दरियागंज (नई दिल्ली) 5. 'अग्रवाल, जी. के., आधुनिक भारतीय चित्रकला का इतिहास, षष्टम संस्करण, आगरा— 2 6. शर्मा, अविनाश बहादुर— भारतीय चित्रकला का इतिहास 7. श्रीवास्तव , ए.एल. भारतीय कला—